इकाई 3 बाल्यावस्था में सामाजिक विकास

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देष्य

3.3 मनोसामाजिक विकास की परिभाषा

3.4 अध्यापक को मनोवैज्ञानिक विकास का अध्ययन क्यों करना चाहिए?

3.5 संवेगात्मक विकास

3.6 सामाजिक विकास

3.7 नैतिक विकास

3.8 माता–पिता और अध्यापकों का प्रभाव

3.9 यह अध्यापक के कार्य से कैसे संबद्ध है?

3.10 सारांष

3.11 इकाई के अंत में अभ्यास

3.12 बोध प्रष्नों के उत्तर

3.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

जब बच्चा विद्यालय में आता है, वह अपना संपूर्ण संसार अपने साथ लाता/लाती है, जिसमें उसकी भावनाएँ, अनुभव, आदत, तरीके शामिल हैं जिनसे वह दूसरे से संबंध बनाता/बनाती है, और असंख्य अन्य पहलू शामिल हैं। इसलिए बच्चे को समझने के लिए वृद्धि के शारीरिक और संज्ञानात्मक आयामों के साथ–साथ उसके विकास के सामाजिक, संवेगात्मक और नैतिक पहलुओं को भी समझना आवष्यक है। पिछली इकाइयों में हम बच्चे की शारीरिक गत्यात्मक और संज्ञानात्मक विकास के बारे में पढ़ चुके हैं। इस इकाई में बाल विकास के मनोवैज्ञानिक और सामाजिक विकास पर चर्चा की गई है। यद्यपि शीर्षक में सामाजिक विकास शब्द का प्रयोग किया गया है परंतु हम इसके विस्तृत परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखकर इसे मनोसामाजिक विकास के रूप में व्यापक अर्थ में लेंगे। यह बच्चे के सामाजिक विष्व से प्रमुख और उन प्रक्रियाओं का अर्थ स्पष्ट करता है जिनसे वह दुनिया को समझता है, संबंध स्थापित करता है तथा विभिन्न मनोसामाजिक पक्षों का मन्तव्य जानता है।

विद्यालय के दिन हमारे जीवन में अत्यधिक महत्वपूर्ण पहलू हैं। हम सभी के पास विद्यालय के दिनों की बहुत सी स्मृतियाँ हैं। आगे बढ़ने से पहले कुछ क्षण लें और अपने विद्यालय के दिनों को याद करें। सोचें, आप क्या करना पसंद करते थे? आपके साथ समय बिताना चाहते थे? जीवन का स्मरण करते हुए अपने पाँच संस्मरण लिखें।

1) ....

2) ....

3) ....

4) ....

5) ....

उपर्युक्त अभ्यास से आप समझ सकते हैं कि विद्यालय में हुए अच्छे या बुरे अनुभव हमें जीवनपर्यन्त याद रहते हैं। आप देखेंगे कि आपकी अधिकांष स्मृतियाँ आपके अनुभवों और आपकी भावनाओं तथा अपने मित्र, प्रतिद्वंद्वी या अध्यापक से संवेगात्मक संबंधों के साथ जुड़ी होती हैं। इस इकाई से हमें यह समझने में सहायता मिलेगी कि किस प्रकार माता की बाँहों में पूरी तरह से असहाय और प्रत्येक वस्तु के लिए माता और देखभाल करने वाले वयस्कों पर निर्भर और बिना असुविधा और प्रसन्नता की अपनी भावनाएँ अभिव्यक्त करने वाला षिषु विकास करता है जिससे दूसरों से संबंध और घनिष्ठताएँ और अपनी स्वयं की पहचान विकसित होती है। आप इकाइयों की भाँति इस इकाई में आपको वे तरीके समझने में सहायता मिलेगी जिसमें बच्चा विकसित होता है। हम विस्तार से विचार करेंगे कि बच्चों में संवेग और सामाजिक विकास कैसे होता है? एक प्रकार से यहाँ यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि बच्चा व्यक्ति बनने के लिए शैशव और प्रारंभिक बचपन के अनुभवों की समग्रता को किस प्रकार आत्मसात और संसाधित करता है और व्यक्ति बनने के लिए समाज के तौर–तरीके समझना प्रारंभ करता है, उन्हें आत्मसात करता है, अपनी पहचान परिभाषित करता और अन्य सार्थक तरीकों से अन्य के साथ से संबंध दिखाना शुरु करता है। तकनीकी शब्दों में इस इकाई में बच्चे के मनोसामाजिक विकास पर चर्चा की गई है। पहले भाग में संक्षेप में मनोसामाजिक विकास का अभिप्राय स्पष्ट किया गया है। अगले भाग में मनोसामाजिक विकास के भिन्न–भिन्न घटकों (सामाजिक, संवेगात्मक और नैतिक) पर चर्चा की गई है। इन सभी घटकों पर यद्यपि पृथक–पृथक अनुभागों में चर्चा की गई है, परंतु ये बहुत निकटता से परस्पर संबद्ध हैं। अंतिम अनुभाग में बच्चे के मनोसामाजिक विकास में माता–पिता और अध्यापकों के प्रभाव तथा भूमिका की चर्चा की गई है।

3.2 उद्देष्य

इस इकाई का उद्देष्य प्रारंभिक विद्यालय के बच्चे का मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक विकास का चित्र प्रस्तुत करना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपः

- बच्चों के मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक विकास की अवधारणा स्पष्ट कर सकेंगे;
- बच्चों के मनोवैज्ञानिक विकास के भिन्न–भिन्न घटकों और अवस्थाओं की पहचान कर सकेंगे;
- बच्चों के मनोवैज्ञानिक तथा नैतिक विकास की सैद्धांतिक समझ विकसित कर सकेंगे;
- बच्चे के वांछित सामाजिक, संज्ञानात्मक और नैतिक विकास में माता–पिता और अध्यापकों की भूमिका की चर्चा कर सकेंगे; और
- प्रारंभिक विद्यालयी बच्चों के मनोवैज्ञानिक विकास संवर्धन में अध्यापक की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे।

3.3 मनोसामाजिक विकास की परिभाषा

सामाजिक संदर्भ में बच्चे के मनोवैज्ञानिक विकास को उसके संवेगात्मक विकास के रूप में समझा जा सकता है। इसमें वृद्धि के संवेगात्मक और सामाजिक पहलू शामिल हैं। संवेगात्मक पहलू में कतिपय वस्तुओं, व्यक्तियों या स्थितियों के प्रति व्यक्ति की भावना शामिल है। विकास के सामाजिक पहलू में बच्चे और उस सामाजिक संदर्भ के बीच अंतःक्रिया शामिल है जिसमें वह पैदा हुआ है। यह समझना चाहिए कि बच्चे का सामाजिक और संज्ञानात्मक विकास उसके शारीरिक और संज्ञानात्मक विकास से बहुत जुड़ा होता है।

उसे अपने शारीरिक और गत्यात्मक विकास और अपने इर्दगिर्द विष्व को समझने के लिए, तथा संज्ञानात्मक योग्यता बढ़ाने के लिए गतिषीलता और नियंत्रण की आवष्यकता होती है। ये उसके सामाजिक तथा संज्ञानात्मक विकास में मुख्य भूमिका निभाते हैं। यह समझना बहुत आवष्यक है कि बच्चे का मनोवैज्ञानिक विकास उन तरीकों से होता है जो उसके लिए बेजोड़ और विशिष्ट हैं और यह जैविक प्रक्रियाओं तथा उसके आसन्न वातावरण के बीच अंतःक्रिया पर निर्भर होता है। फिर भी वृद्धि के कुछ स्पष्ट प्रतिमान हैं जो बच्चे के मनोवैज्ञानिक जगत की पूरी जानकारी देते हैं।

सामाजिक संदर्भ क्या है? यूरी ब्रोनफेनब्रेन्नेर, प्रसिद्ध रूसी–अमरीकी मनोविज्ञानी ने पारिस्थितिक मॉडल (चित्र 3.1) नाम का मानव विकास का मॉडल दिया। इस मॉडल में उसने विकासषील व्यक्ति और उसके परिवेष जैसे परिवार, विद्यालय, संस्कृति, राजनीति आदि के बीच संबंध दिखाए हैं।

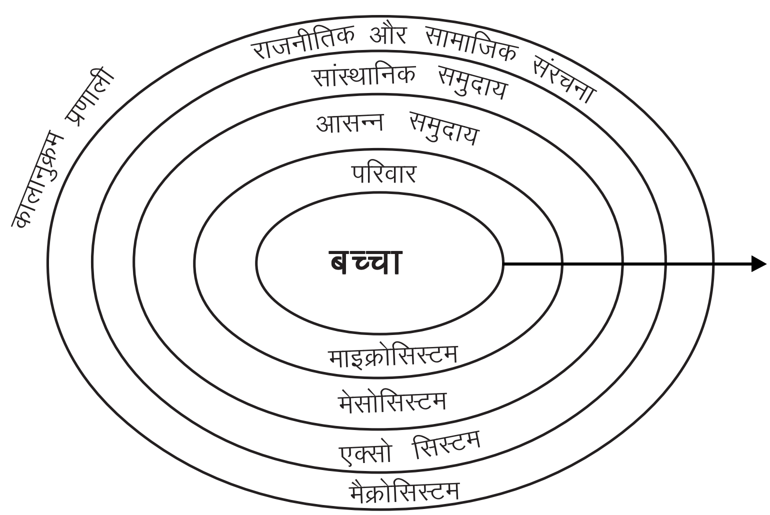

चित्र 3.1: मानव विकास का पारिस्थितिकी मॉडल

बच्चे को समझने के लिए, सामाजिक संदर्भ में बच्चे के विकास पर विचार करना आवष्यक है अर्थात् उसके परिवार, साथियों, अध्यापकों, समुदाय और उसके सामाजिक, राजनीतिक परिवेष के प्रभाव को ध्यान में रखना आवष्यक है। आगे अध्ययन करते हुए, आप बच्चे और उसके भौतिक और सामाजिक परिवेष के बीच संबंध समझ सकेंगे।

3.4 अध्यापक को मनोवैज्ञानिक विकास का अध्ययन क्यों करना चाहिए?

आप सोच रहे होंगे कि बच्चे के मनोवैज्ञानिक विकास का अध्ययन करना अध्यापक के लिए क्यों महत्वपूर्ण है। बच्चे के विकास के मनोवैज्ञानिक आयाम की जानकारी से आप न केवल खास आयु के बच्चों में वृद्धि के कुछ सार्वदेषिक प्रतिमान के बारे में पढ़ेंगे बल्कि इससे आप बच्चों के बीच व्यक्तिषः अंतर भी समझ सकेंगे। मनोवैज्ञानिक विकास का अध्ययन कर आप बच्चे और उसके परिवेष के बीच संबंध समझ सकेंगे। आप बच्चे के चहुँमुखी विकास के लिए सुरक्षित और सहयोगषील परिवेष का महत्व समझ सकेंगे। बच्चे के बारे में इस जानकारी से आप अपने छात्रों से बेहतर संबंध दिखा सकते हैं। आप उनकी समस्या की पहचान कर सकते हैं और हल निकालने में उनकी सहायता कर सकते हैं। छात्रों की

मनोवैज्ञानिक आवष्यकताएँ जानने से आपको उनके लिए प्रभावकारी षिक्षण अधिगम कार्यनीतियाँ विकसित करने में भी सहायता मिलेगी जिससे अधिगम उनके लिए वास्तव में आनंददायक सिद्ध होगा।

अनुवर्ती भागों में आप बच्चे के विकास के संवेगात्मक, सामाजिक और नैतिक घटकों के बारे में पढ़ेंगे। यद्यपि इन घटकों पर चर्चा पृथक भागों में की गई है, आप यह देख सकेंगे कि वे काफी अधिक सहसंबद्ध हैं और इसे मनोवैज्ञानिक विकास के अधिक बड़े संदर्भ में समझा जाना आवष्यक है।

3.5 संवेगात्मक विकास

किसी व्यक्ति, वस्तु या स्थिति के प्रति व्यक्ति की भावनाएँ या प्रभाव संवेग हैं जिनके कारण शारीरिक उत्तेजना, सचेतन अनुभव अथवा व्यवहार संबंधी अभिव्यक्ति पैदा होती है। उदाहरण के लिए, नौकरी के लिए अपने पहले साक्षात्कार, मंच पर आपके पहले भाषण, अजनबी से आपकी बातचीत के बारे में सोचें। आपकी शारीरिक अनुक्रिया क्या थी? क्या आपका दिल तेजी से धड़कने लगा? क्या आपको पसीना आ रहा था? क्या आप मुस्करा रहे थे या आपकी बेचेनी आपके चेहरे पर दिखाई दे रही थी? क्या आप घड़ी के बारे में अभी सोचते हैं? अब आपको कैसा महसूस होता है? यह स्थिति के प्रति व्यक्तिगत भावना है जो इसके महत्व को बढ़ाती है। मानव प्राणी संवेगों का अनुभव करता है, कुछ आपको "अच्छा" महसूस करते हैं तो कुछ आपको "बेचैन" करते हैं। यह समझना अनिवार्य है कि सभी अन्य की भाँति बच्चे भी विकास की प्रक्रिया से गुजरते हैं। वे विकास की विभिन्न अवस्थाओं से होकर आगे बढ़ते हैं जो सार्वदेषिक हैं परंतु इनमें भी व्यक्तिषः अंतर रहते हैं जो उनकी आनुवंषिक विशेषताओं और व्यक्तिगत अनुभवों द्वारा मूर्त रूप लेते हैं।

भिन्न–भिन्न व्यक्तियों में एक ही प्रकार की स्थिति अलग–अलग संवेगात्मक अनुक्रिया उत्पन्न कर सकती है।

बोध प्रष्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

निम्नलिखित स्थिति पढ़िए और तदन्तर प्रष्नों का उत्तर दीजिएः

मीरा आठ वर्ष की है। अपने माता–पिता और छोटे भाई के साथ वह छोटे से कस्बे में रहती है। उसका बहुत खुषनुमा व्यक्तित्व है वह अपनी सहेलियों के लिए दयालु और सहयोगषील है और इसलिए उसकी सहेलियाँ उसकी प्रषंसा करती हैं। उसकी बहुत सी सहेलियाँ हैं जो उसके पड़ोस में रहती हैं तथा उसकी कक्षा में पढ़ती हैं। उच्च पद और वेतन वृद्धि के साथ मीरा के पिता की पदोन्नति हुई है, उसे अन्य शहर में नया मकान भी दिया गया है। नए शहर में मीरा को सहेलियाँ बनाने में कठिनाई हो रही है। जबकि उसका भाई पड़ोसी बच्चों के साथ खेलने बाहर जाता है। मीरा घर में ही रहती है और टेलीविजन देखती है। उसके नए विद्यालय में जबकि अन्य लड़कियाँ बाते करती हैं और साथ–साथ खेलती हैं, मीरा शांत और अलग रहती हैः

1) आप के अनुसार मीरा की समस्या क्या है?

....

....

....

....

....

2) उसकी समस्या के क्या कारण हो सकते हैं?

....

....

....

....

....

3) क्या आप सोचते हैं कि प्रत्येक बच्चा ऐसी स्थिति में ऐसा ही व्यवहार करेगा?

....

....

....

....

उपर्युक्त स्थिति में आप बच्चे पर और उसके व्यवहार पर स्थान परिवर्तन का प्रभाव देख सकते हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने से संभव है किसी अन्य बच्चे के लिए स्थिति कठिन न हो जैसी यह मीरा के लिए थी। इसका कारण यह है कि भिन्न–भिन्न स्थितियों से निपटने के लिए प्रत्येक बच्चे के अपने अलग–अलग तरीके हो सकते हैं। कुछ बच्चों के लिए एक स्थान से दूसरे में जाना, नए लोगों से मिलना और नए मित्र बनाना सुखद अनुभव है परंतु अन्य के लिए यह चुनौतीपूर्ण स्थिति हो सकती है।

यद्यपि प्रत्येक बच्चा वृद्धि के विशेष प्रतिमान से गुजरता है, इस क्षेत्र में अनुसंधानकर्त्ताओं ने बच्चे के संवेगात्मक विकास में निम्नलिखित सामान्य तरीकों की पहचान की हैः

- बच्चे व्यापक श्रेणी के संवेग दर्षाते हैं, जैसे आनंद और प्रसन्नता, क्रोध, विद्वेष, उत्सुकता, अपराध आदि। उसके संवेग तीव्र और क्षणिक होते हैं, अर्थात् वे प्रायः घटते बढ़ते हैं और बहुधा बहुत कम समय के लिए लुप्त हो जाते हैं।
- संवेगात्मक व्यवहार में सबसे अधिक तीव्र परिवर्तन बच्चे के जीवन के प्रारंभिक वर्षों में होते हैं, परंतु ये बच्चे के बाल्यावस्था में पहुँचने पर स्थायी होने लगते हैं।
- भले ही मनोसामाजिक विकास पष्चजात (epigenetic) सिद्धांत के अनुरूप होता है जिसका अभिप्राय है कि बच्चा विकास की एक अवस्था से अगली अवस्था में पूर्व निध ारित प्रतिमान के अनुसार प्रवेष करता है।

- बच्चे के जीवन के अनुभवों का उसके संवेगात्मक व्यवहार पर बड़ा प्रभाव होता है। जीवन अनुभव की विविधता के कारण समान स्थितियों में बच्चों का संवेगात्मक व्यवहार एक–दूसरे से भिन्न होता है।

- संवेगात्मक व्यवहार प्रतिमान उनके स्वाभाविक कारकों और अनुभवों के आधार पर बेजोड़ होते हैं, कुछ सामान्य प्रतिमान होते हैं जो सार्वदेषिक हैं और जो समान सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ के सभी सदस्यों पर लागू होते हैं।

- बच्चे सामाजिक रूप से स्वीकार्य तरीकों में अपने संवेगों को व्यक्त करना सीखते हैं। बाल्यावस्था की प्रारंभिक अवधि में बच्चा अपने संवेगों को अधिक खुले रूप में व्यक्त करता है परंतु वह जैसे–जैसे बढ़ता है, वह अधिक सामाजिक रूप से स्वीकृत तरीकों में अपने संवेगों को विनियमित और दबाना सीखता है। इसलिए, बच्चे की संवेगात्मक अभिव्यक्ति पर उसके घर और विद्यालय के संवेगात्मक वातावरण का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है।

जैसा कि आपने पहले भी पढ़ा है, बच्चे की संवेगात्मक अभिव्यक्ति उसके जीवन की प्रारंभिक अवधि में स्वाभाविक होती है। जैसे–जैसे वह बढ़ता है वह अपने परिवार, सहपाठियों और विद्यालय से संवेग अभिव्यक्त करने के सामाजिक रूप से स्वीकार्य तरीकों को सीखता है। इस प्रकार परिवार और विद्यालय का यह बहुत महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है कि बच्चे को उन तरीकों में अपने संवेग व्यक्त करना सिखाएँ जो दूसरों को स्वीकार्य हैं। वे या तो बच्चे के सकारात्मक संवेगात्मक स्वास्थ्य का पोषण कर सकते हैं या वे बच्चे के संवेगात्मक विकास में गंभीर रूप से बाधक हो सकते हैं।

बोध प्रष्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

4) अपनी कक्षा में बच्चों का अवलोकन कीजिए और उनके द्वारा प्रदर्षित किए गए कोई पाँच संवेग पहचानिए।

i) ....

ii) ....

iii) ....

iv) ....

v) ....

vi) ....

5) बच्चे कई प्रकार के संवेग दिखाते हैं, भय उनमें से एक है। अध्यापक होने के नाते आप अध्येयताओं के लिए भय से मुक्त अधिगम वातावरण बनाने हेतु क्या कार्रवाई करेंगे? तर्क सहित तीन तरीके लिखिएः

....

....

....

संवेग के मामले में बच्चे बहुत स्वतः प्रवर्तित व्यवहार प्रदर्षित करते हैं। माता–पिता के साथ–साथ अध्यापक की भी बच्चों को अपने संवेग ऐसे तरीके में व्यक्त करना सिखाने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है जो अन्य को स्वीकार्य हो। जैसे–जैसे बच्चे बढ़ते हैं और अपने संवेगों को विनियमित करना सीखते हैं, उनका व्यवहार उनकी संवेगात्मक अवस्था का दर्पण होता है। यद्यपि यह अच्छा है कि बच्चे सामाजिक रूप से स्वीकार्य तरीके में संवेग व्यक्त करना सीखते हैं, परंतु कभी–कभी यह चरम सीमा में जा सकता है जिसमें बच्चा अपने संवेगों को विनियमित करने के बजाय उन्हें अभिव्यक्त करना शुरु करता है। यह भय, मानसिक आघात, घृणा, द्वेष, चिंता या आक्रमण यहाँ तक कि अभिव्यक्त भावनाओं के रूप में समस्यात्मक या बच्चे के विकास और व्यक्तित्व के लिए हानिकारक हो सकता है। मन में गहरी बैठी समस्याएँ बहुधा वयस्कता तक भी अनसुलझी रह सकती हैं। बच्चों को इन नकारात्मक संवेगों को निकालने और तनाव नियंत्रित करने के लिए के सकारात्मक तरीके सिखाए जाने चाहिए। वयस्क के रूप में यह आवष्यक हो जाता है कि माता–पिता और अध्यापक बच्चों के संवेगों के प्रति संवेदनषील रहे।

इसका अभिप्राय है कि वे बच्चों का ध्यानपूर्वक अवलोकन करें तथा उन्हें संवेगात्मक अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करें। कभी–कभी बच्चे का व्यवहार ध्यानपूर्वक अवलोकन करने पर माता–पिता या अध्यापक बच्चे की संवेगात्मक अवस्था के बारे में जान सकते हैं। उदाहरण के लिए, बिस्तर गीला करना ऐसा ही व्यवहार है जो संवेगात्मक दबाव का सूचक है। बच्चे के सकारात्मक संवेगात्मक विकास संवर्धन के लिए माता–पिता और अध्यापक के लिए बच्चे की वृद्धि के संवेगात्मक पहलुओं को समझना महत्वपूर्ण है।

आप इस तथ्य से सहमत होंगे कि बच्चे का मनोवैज्ञानिक विकास शून्य में नहीं हो सकता है, उसके सामाजिक संदर्भ का उसके विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। अगले भाग में आप बच्चे के विकास के सामाजिक आयाम के बारे में पढ़ेंगे।

3.6 सामाजिक विकास

सामाजिक विकास से अभिप्राय है बच्चे का अन्य से अन्योन्यक्रिया करते हुए अन्य से सामाजिक संबंध विकसित करना है। घर पर पिछले अनुभव द्वारा और अपने इर्दगिर्द की वस्तुओं को खोजने में विकसित विष्वास और स्वावलम्बन है, बच्चे के सामाजिक विकास को प्रभावित करता है। इसके अलावा, यह उस जानकारी द्वारा भी प्रभावित होता है जिससे बच्चा विष्वासों का नेटवर्क विकसित करता है और जिससे बच्चे ने सीखा है, कि वह कौन है।

बच्चे का सामाजिक विकास उसके सामाजिक संदर्भ पर निर्भर होता है जिसमें उसके माता–पिता, छोटे बच्चे, समवर्गी, पड़ोसी, अध्यापक, रिष्तेदार, आदि सम्मिलित होते हैं। इसमें उसकी मनोवृत्ति पर इनका प्रभाव भी शामिल है। बच्चे के सामाजिक विकास में व्यक्ति का अंतर्वैयक्तिक संबंध उसकी अर्जित कुषलता, मूल्य और तरीके शामिल हैं जिनके द्वारा व्यक्ति समाज में समायोजन करता है।

चित्र 3.2: बच्चों का सामाजिक विकास

आकृति

सामाजिक विकास के माध्यम से बच्चा अन्यों को तथा उनके दृष्टिकोण को और समूह में काम करना भी स्वीकार करना सीखता है। इसके अलावा, सहभाजन, सहयोग, अपनी बारी के लिए प्रतीक्षा करना, अन्य लोगों और वस्तुओं का सम्मान करना आदि गुणों को सीखना सामाजिक विकास प्रक्रिया का अंग हैं। बच्चे का सामाजिक व्यवहार कुछ आयु संबंधी पैटर्नों का अनुसरण करता है जिन्हें बहुत से सिद्धांतों ने निर्धारित किया है। मनोवैज्ञानिक विकास पर एरिक्सन का कार्य प्रमुख हैं।

आधुनिक मनोवैज्ञानिक, एरिक्सन, ने मनोवैज्ञानिक विकास के अपने सिद्धांत में व्यक्ति के सामाजिक विकास का मार्ग भी स्पष्ट किया। उसके सिद्धांत के अनुसार व्यक्ति को आठ मनोवैज्ञानिक अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है, प्रत्येक अवस्था के अपने लक्ष्य, समस्याएँ और उपलब्धियाँ होती हैं। प्रत्येक अवस्था पर व्यक्ति **विकासात्मक संकट** का सामना करता है। सकारात्मक विकास और संभावित अस्वस्थ विकल्प के बीच संघर्ष का सामना करता है जिनका स्वस्थ विकास के लिए समाधान करना आवष्यक हैं। ये संघर्ष समाज के अन्य सदस्यों से व्यक्ति की अंतक्रिया के कारण और सामाजिक तथा सांस्कृतिक शक्तियों के कारण उत्पन्न होते हैं। एरिक्सन द्वारा उल्लिखित आठ अवस्थाएँ निम्न प्रकार हैं:

अवस्था 1: बुनियादी विष्वास बनाम अविष्वास (षैषव)

नवजात षिषु अपनी उत्तरजीवितता के लिए पूरी तरह से अपनी माता और अन्य देखभाल करने वालों पर निर्भर होता है, विष्वास की जड़ें इस घनिष्ठ संबंध में होती हैं जहाँ देखभाल की गुणवत्ता और प्यार भरा संबंध बच्चे में विष्वास की भावना का निर्माण करता है। टकराव और विष्वास की अनुपस्थिति के कारण अविष्वास उत्पन्न होता है। यह ह बुनियादी संघर्ष – विष्वास बनाम अविष्वास। अभिप्राय है कि यदि माता–पिता या मुख्य देखभालकर्त्ता बच्चे को प्यार और स्नेह से संभालता है, और बच्चे की देखभाल और भोजन की आवष्यकता नियमित रूप से पूर्ण होती है तो बच्चा विष्वास की भावना विकसित करेगा। यदि माता–पिता से बच्चे के संबंध में प्यार और विष्वास का अभाव है तो बच्चा अविष्वास की भावना विकसित करता है।

अवस्था 2: स्वायत्तता बनाम लज्जा/संदेह (प्रारंभिक बाल्यावस्था)

दूसरी अवस्था स्वायत्तता (अर्थात विष्वास और आत्मनिर्णय) की भावना के विकास से संबंधित है। बढ़े हुए पेषीय समन्वय और मूत्राषय के विकास तथा आंत नियंत्रण से बच्चा विष्वास और स्वायत्तता की भावना विकसित करता है, अर्थात् स्वयं कार्य करने की भावना

– जैसे अपने दाँतों पर ब्रष करना, स्नान करना, विद्यालय के लिए स्वयं तैयार होना आदि। परन्तु यदि माता–पिता बहुत अधिक अपेक्षा करते हैं या अत्यधिक एहतियाती हैं, और बच्चे से क्रमषः बहुत जल्दी या बहुत विलम्ब से काम करने की आषा करते हैं, तो बच्चे में अपनी योग्यता पर संदेह या लज्जा की भावना विकसित हो सकती है। समस्या यह है कि ये अनसुलझे टकराव बाद की अवस्था और काफी प्रौढ़ावस्था तक ठहरे रहते हैं। ऐसे बच्चे जिन्हें बचपन में लगातार लज्जित किया जाता रहता है, काफी बाद की अवस्थाओं तक ऐसा महसूस करते रहते हैं।

अवस्था 3: पहलषक्ति बनाम अपराध (मध्य बाल्यावस्था)

पहलषक्ति का संबंध कार्य की समझ, योजना और निष्पादन की गुणवत्ता से है। शारीरिक, गत्यात्मक और संज्ञानात्मक विकास के कारण बच्चे विष्व और अपनी नई प्राप्त क्षमताओं के बारे में जानने के लिए उत्सुक होते हैं। 4 और 5 वर्ष के बच्चों के लिए यह सामान्य नहीं हे कि वे निरंतर भिन्न–भिन्न कार्य करने में संलग्न रहें। यह आवष्यक है कि भले ही बच्चे गलती करते हों, माता–पिता को सौम्य परंतु उनसे दृढ़ रहना चाहिए। यदि माता–पिता या अध्यापक बच्चे को निरुत्साहित करते हैं और उसका उपहास करते हैं तो बच्चे में अपराध बोध की भावना विकसित होती है। इसके अलावा, दोषबोध और मतभेद बच्चे की योग्यता को प्रभावित करता है और विद्यालय तथा घर में विभिन्न गतिविधियों में उसकी सहभागिता को प्रभावित करता है।

अवस्था 4: परिश्रम बनाम हीनता (परवर्ती बाल्यावस्था)

इस अवस्था में बच्चे से बहुत से हुनर सीखने की आषा की जाती है और वह जानता है कि उनके प्रयोग करने से उसे बड़ों से मान्यता मिल सकती है। जब बच्चे को काम करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है और जब उसके प्रयासों के लिए उसकी प्रषंसा की जाती है तो वह अपना परिश्रम प्रदर्षित करता है, जैसे परिश्रम से कार्य करने का प्रतिमान और किए गए कार्य से संतुष्टि की प्राप्ति। यदि बच्चा प्रत्याषित निपुणता प्राप्त नहीं कर सकता है और/या बड़ों की आषाएँ पूरी करने में असमर्थ रहता है तो वह हीनभावना विकसित करता है। बच्चा यह अनुभव करने लगता है कि वह जो कुछ भी करता है, सदा गलत ही होगा।

अवस्था 5: अधिगमः पहचान बनाम पहचान भ्रम (किषोरावस्था – किषोरावस्था पूर्व)

इस अवस्था का ध्यान इस बात पर है कि अपने आपको समझना और परिभाषित करना बच्चों के लिए आवष्यक है। यह उनकी पहचान से संबंधित है – वे कौन और क्या है? पिछली अवस्था से प्राप्त अधिगम और क्षमता अधिकतर बच्चे को उसका पहचान बताती है। इसमें सांस्कृतिक पहचान और व्यक्तिगत पहचान भी शामिल है, समुदाय के सदस्य के रूप में पहचान और व्यक्ति के रूप में पहचान भी शामिल है। इस अवस्था के दौरान किषोर वयस्क विष्व में अपनी संभावित भूमिका के बारे में अधिक सोचता है। वह इन प्रष्नों का समाधान करने के लिए संघर्ष करता है "मैं कौन हूँ" और वह अपने माता–पिता से अपने समकक्षियों के पास जाता है, जो उसकी भाँति अधिक हैं। इस अवस्था में यह ज्ञात करना सामान्य बात है कि बच्चे भिन्न–भिन्न समूहों या टोलियों से संबद्ध हो जाते हैं। मुख्य मनोवैज्ञानिक कार्य पहचान प्राप्त करना है।

अवस्था 6: घनिष्ठता बनाम अलगाव (प्रारंभिक वयस्कता)

एक बार जब बच्चे की पहचान स्थापित हो जाती है तो वह विपरीत लिंग के साथ घनिष्ठ संबंध बनाने के लिए तैयार हो जाता है। इस अवस्था में व्यक्ति त्याग और समझौता करने के लिए तैयार रहता है ताकि प्रतिबद्धता पर आधारित स्थायी सम्बंध स्थापित हो सकें। जो

व्यक्ति इस प्रकार की घनिष्ठता का अनुभव नहीं कर सकता है, उसमें अलगाव की भावना विकसित हो जाती है और इस प्रकार प्रतिबद्ध संबंधों से बचने की प्रवृत्ति पनपती है।

अवस्था 7: विकासषीलता बनाम रुद्धता (मध्य वयस्कता)

इस मध्य आयु के दौरान व्यक्ति का मुख्य विकास कार्य भावी पीढ़ी की देखभाल करना है और समाज की उत्पादकता में वृद्धि में योगदान करना है। यदि व्यक्ति परिवार बनाने में सफल होता है और/या समाज की उत्पादकता के लिए कार्य करता है, तो वह विकासषीलता की भावना महसूस करता है। परंतु यदि व्यक्ति ऐसा अनुभव करने में असफल होता है तो वह अलगाव की भावना से ग्रसित होगा और रुद्धता अनुभव करेगा।

अवस्था 8: समन्वयता और निराषा (वृद्धा अवस्था)

एरिक्सन के अनुसार वह व्यक्ति जिसने पिछली अवस्थाओं के टकरावों का समाधान सफलतापूर्वक कर लिया है और यदि वह अपने जीवन पर पीछे मुड़ कर देखता है। यदि वह अपने जीवन की उपलब्धियों से संतुष्ट हैं, तो वह समन्वयता की भावना प्राप्त करता है। वह जो दूसरी ओर व्यक्ति संतुष्टि को प्राप्त करने में असफल होते हैं, उनमें निराषा की भावना विकसित होती है क्योंकि अपने विगत जीवन पर नज़र डालने पर उन्हें महसूस होता है कि वे अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में असफल रहे हैं।

यहाँ यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि भारत में जन्में प्रसिद्ध मनोविज्ञानी सुधीर कक्कड़ ने भारत के संदर्भ में एरिक्सन के सिद्धांत को समझने और व्याख्या करने में महत्वपूर्ण कार्य किया है। कक्कड़ (1981) ने भारत में पैदा होने वाले बच्चे पर प्रचुर और बहुल प्रभावों की विषद व्याख्या की है, इन प्रभावों में विस्तारित परिवार में पलने वाले बच्चों का अनुभव और मानदंड निर्धारित कर समुदाय जो प्रभाव डालने का प्रयास करता है, और धार्मिक, आनुष्ठानिक और त्यौहारों, मिथकों, साहित्य और नीति कथाओं जैसी बहुत–सी सांस्कृतिक प्रथाएँ हैं जो बच्चे के विकास को प्रभावित करती हैं। भारतीय परिवारों में इनकी बहुत अधि ाक मान्यता हैं। कक्कड़ यह देखने का प्रयास करता है कि एरिक्सन की भिन्न–भिन्न अवस्थाएँ इस संदर्भ में कैसे परिलक्षित होती हैं और बच्चे की पहचान को किस प्रकार बनाती हैं। भेदभाव और पूर्वग्रह जो भारतीय समाज में बालिकाओं और महिलाओं के प्रति विद्यमान हैं, को स्वीकार करते हुए कक्कड़ ने महिलाओं की पहचान प्रकट करने के संबंध में कुछ प्रासंगिक प्रेक्षण किए हैं। नीचे बॉक्स में इनमें से कुछ का उल्लेख किया गया है जो महत्वपूर्ण हैं, अतः इन पर विचार करना आवष्यक हैं।

पहचान बनाम लिंग

"देष के कुछ भागों में पुत्र जन्म पर ढ़ोल बजाए जाते हैं, ऊँची आवाज में शंखनाद किया जाता है और दाई को दिल खोलकर दान दिया जाता है जबकि लड़की के जन्म पर स्वाभाविक रूप से ऐसा कुछ भी नहीं किया जाता है।"

"बहुत से संस्कारों के निष्पादन के लिए विशेषकर जो माता–पिता की मृत्यु के बाद किए जाते हैं, पुत्र का होना नितांत आवष्यक है .. उसके नगण्य आनुष्ठानिक महत्व के अलावा पुत्री अप्रषमित व्यय है जिससे परिवार की आयु के लिए कोई योगदान नहीं होगा और जो विवाह पर दहेज के रूप में परिवार का पर्याप्त भाग ले जाएगी।"

"पुत्री को उसके "जन्म के" घर में अतिथि समझा जाता है।"

"संभावना यह है कि पितृसत्तात्मक समाज में बालिकाएँ और महिलाएँ अपने ही विरुद्ध आक्रामक होगी और महत्वहीनता तथा हीनता की भावना में सांस्कृतिक अवमूल्यन करेगी।"

स्रोतः कक्कड़, एस., *दि इनर वर्ल्ड,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 1981, पृ. 58–59।

अध्यापक के रूप में आपके लिए एरिक्सन का सिद्धांत और कक्कड़ के परिप्रेक्ष्य समझना आवष्यक है। इसके दो कारण हैं: पहला, अध्यापक बच्चे की मनोसामाजिक विकास और उन मुद्दों से अवगत होता है जो बच्चों को प्रभावित कर सकते हैं। खासतोर पर अनसुलझे संघर्ष बच्चे में भिन्न–भिन्न समस्याएँ और व्यवहार उत्पन्न कर सकते हैं। संवेदनषीलता के साथ इन्हें समझना और अधिगम करना आवष्यक है। यह भी समझने की आवष्यकता है कि हमारे समाज में कुछ भेदभावपूर्ण प्रथाएँ बालिकाओं और अन्य सीमांतक अथवा उपेक्षित समूहों को कैसे प्रभावित करती हैं। दूसरा, बच्चे के लिए विद्यालय महत्वपूर्ण सामाजिक संदर्भ है और ऐसा वातावरण प्रदान करना अध्यापक का उत्तरदायित्व है जो बच्चे की आवष्यकताओं की पूर्ति कर सके। प्यार का महत्व और परिवार और विद्यालय द्वारा बच्चे की स्वीकार्यता अनिवार्य है ताकि उसके चहुँमुखी स्वस्थ विकास को सुनिष्चित किया जा सके। यह वही समय है जब बच्चा अपने संपूर्ण जीवन की नींव रखता है। इस लिए अध्यापक को ऐसे तरीके अपनाने चाहिए जिनसे बच्चों में निर्णय करने के कौषल विकसित हों और वे कार्य करते हुए अनुभव प्राप्त कर सकें।

बोध प्रष्न

टिप्पणी: क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

6) अध्यापक के रूप में आप अपनी कक्षा में बच्चे में निम्नलिखित को बढ़ावा देने वाले कुछ निष्चित तरीके लिखें: (अपना उत्तर नीचे दिए गए स्थान में लिखिए)

पहल की भावना

....

....

....

....

....

परिश्रम की भावना

....

....

....

....

....

....

कार्यकलाप इस तरीके में चुने जाने चाहिए कि वे प्रत्येक बच्चे को सफलता अनुभव करने और विविध क्षमताएँ प्राप्त करने का अवसर प्रदान करते हों। इस संपूर्ण प्रक्रिया के दौरान अध्यापक को निरुत्साहित प्रतीत होने वाले बच्चों को लगातार प्रोत्साहित करना चाहिए।

कुछ संबंधित अवधारणाएँ

जैसे–जैसे बच्चा बढ़ा होता है उसका सामाजिक संसार भी फैलता है, वह प्रतिदिन नए अनुभव प्राप्त करता है और अधिक लोगों से अंतःक्रिया करता है। बच्चे का अपने आपसे मोह हम सभी पर्याप्त रूप से देखते हैं – कितनी बार हम उसे शीशे के आगे खेलते हुए देखते हैं, वे खास तरीके से अपने बालों को कंघी करते हैं, अपने निष्पादन पर आष्वासन और प्रषंसा प्राप्ति की आषा करते हैं। अपने आपको जानने के बीज प्रारंभिक आयु से ही होते हैं। परंतु यह केवल तब होता है जब वह बढ़ती है और अपनी योग्यताओं, संभावनाओं, दुर्बलताओं और प्रतिभा के बारे में जानने लगते हैं। वे अपने बारे में राय विकसित करते हैं जो काफी हद तक उनकी अपनी क्षमताओं की समझ के आधार पर होती हैं। परंतु आत्मधारणा शारीरिक कारणों, यथा, लम्बाई, वजन या रंग, लिंग/जेंडर, पारिवारिक पृष्ठभूमि, जाति और धर्म पृष्ठभूमि जैसे कारकों द्वारा भी प्रभावित होती है। अपने बारे में बच्चे की यह राय "**आत्मधारणा**" के रूप में जानी जाती है। अपनी आत्मधारणा पर आधारित बच्चा लगातार अपना मूल्यांकन करता रहता है, जैसे, वह गाना गाने में अच्छा है या नहीं, आसानी से मित्र बना सकता है या नहीं, अच्छी लिखावट है या नहीं आदि। बच्चा अपने आप से अपने बारे में वर्णन करते समय अपने को कितना महत्वपूर्ण मानता है, **स्वाभिमान** कहलाता है। स्वाभिमान महत्वपूर्ण है क्योंकि यह बच्चे के संपूर्ण व्यवहार को प्रभावित करता है। यदि बच्चा विष्वास करता है कि उसमें अधिक सकारात्मक गुण हैं तो उसका स्वाभिमान ऊँचा होगा और वह अधिक आत्मविष्वासी होगा। इसी प्रकार यदि बच्चे विष्वास करते हैं कि उसमें नकारात्मक गुण अधिक हैं तो उसका निम्न स्वाभिमान होगा और परिणामस्वरूप उसमें अपने बारे में अधिक आत्मविष्वास नहीं होगा। यह आवष्यक है कि आत्मधारणा वास्तविक और प्रसरणषील गुणों पर आधारित होनी चाहिए जैसे बच्चा क्या कर सकता है?

बच्चे अपने भौतिक और सामाजिक वातावरण से अपनी अंतःक्रिया के आधार पर भी अपने बारे में राय बना सकते हैं। उदाहरण के लिए जिस बच्चे को अधिक बच्चा प्यार किया जाता है तथा जिसकी प्रषंसा की जाती है उसका स्वाभिमान उस बच्चे की तुलना में अधिक ऊँचा होगा जिसे बहुधा डाँटा जाता है तथा दंडित किया जाता है। इसलिए आप आकलन कर सकते हैं कि बच्चे की आत्मधारणा में, संज्ञानात्मक, संवेगात्मक और सामाजिक घटक शामिल हैं। चूँकि बच्चे की स्व–अवधारणा उसके व्यवहार को विनियमित करती हैं, इसलिए माता–पिता और अध्यापक को चाहिए कि बच्चे को वे स्वयं के बारे में सकारात्मक राय बनाने में बच्चों की सहायता करें। अध्यापक को ऐसा वातावरण सृजन करना चाहिए जो बच्चे के लिए जोखिम भरा न हो। उसे अपने छात्रों को स्वीकार करना चाहिए और उनके प्रयासों की प्रषंसा करनी चाहिए। कुछ व्यवहार कक्षा में अस्वीकार्य हैं, जैसे थूकना, गाली देना, धमकाना, लड़ना झगड़ना आदि। इस प्रकार की समस्याओं से निपटते समय उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि वे केवल उसके व्यवहार को स्वीकार नहीं करते हैं। अध्यापक को बच्चे को "खराब" वर्गीकृत नहीं करना चाहिए।

कभी–कभी जो राय बच्चा अपने बारे में बनाता है, वह उसकी योग्यता का सही प्रतिबिम्ब नहीं होती है। उदाहरण के लिए, जो बच्चा चित्रकला में बहुत अच्छा नहीं है, परंतु वह कुछ भी चित्रकला बनाता है, उसके माता–पिता उसकी प्रषंसा करते हैं कि वह चित्रकला में असाधारण रूप से अच्छा है। उसकी चित्रकला योग्यता के बारे में उसकी राय उसकी क्षमताओं का सही प्रातिनिधित्व नहीं करती है। इसलिए बच्चों को उच्च स्वाभिमान विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करने के अलावा माता–पिता और अध्यापक के लिए आवष्यक है कि वे बच्चे को अपनी संभावित उपयुक्तता का मूल्यांकन करने में सहायता करें। बच्चे के प्रयासों के लिए उसकी सच्चे ढंग से प्रषंसा करनी चाहिए परंतु बच्चे के साथ उसके सुधार की संभावनाओं पर भी चर्चा करनी चाहिए।

3.7 नैतिक विकास

नैतिकता का संबंध सही और गलत की अवधारणा से है। नैतिक विकास उन प्रक्रियाओं के विकास से संबंध रखता है जिनके माध्यम से बच्चा सही और गलत के सिद्धांत सीखता है। सन्ट्रोक (2008) के अनुसार नैतिक विकास लोगों के बीच न्यायसंगत अंतःक्रिया के नियमों और परंपराओं से संबंधित है। इसमें नियमों और परंपराओं से संबंधित हैं। इसमें नियमों और परंपराओं के बारे में ऐसे विचार, भावनाएँ और क्रियाएँ अंतर्निहित हैं जिनसे स्पष्ट होता है कि लोगों को अन्य लोगों से कैसी अंतःक्रिया कैसी करनी चाहिए।

नैतिक विकास में नैतिक अवधारणाएँ और नैतिक व्यवहार सीखना सम्मिलित होता है। इसका संबंध ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, दूसरों के लिए सम्मान, निष्कपटता, सामूहिक मानकों की अनुरूपता जैसे मूल्यों का अर्जन करना है जिन्हें समाज बच्चों से ग्रहण और व्यवहार में लाने की आषा करता है। इसमें यह भी निरूपित होता है कि बच्चे नैतिक अवधारणाएँ कैसे विकसित करते हैं।

निम्नलिखित स्थितियों को ध्यानपूर्वक पढ़िएः

1) टीना और अमिता दोनों बहुत अच्छी सहेलियाँ हैं एक दिन चित्रकला की कक्षा में अमिता देखती है कि टीना क्रेऑन (मोम के रंग) का नया बाक्स लाई है। पूरी कक्षा के दौरान अमिता का रीना अपने नए रंग प्रयोग करने नहीं देती है। अमिता कलर बॉक्स चुराने की सोचती है जब टीना पानी पीने गई थी। परन्तु उसने अनुभव किया कि उसकी माँ ने उससे कहा था कि चोरी करना बुरी बात है और यदि उसे यह मालूम होगा कि अमिता ने टीना का कलर बॉक्स चुराया है तो वह उसे दंड देगी। इसलिए उसने अनिच्छा से टीना का कलर बॉक्स चोरी करने का इरादा त्याग दिया।

2) विद्यालय में लंच का समय है और सभी बच्चे खाने की वस्तुएँ खरीदने के लिए केंटीन की खिड़की के समीप लम्बी लाइन में खड़े थे। सलीम लाइन के सामने जाता है और एक बच्चे को आगे बढ़कर धक्का देता है। बच्चा नीचे जमीन पर गिर जाता है और उसके घुटनों पर खरोंच लग जाती है। सलीम को अपनी इस कार्रवाई पर बुरा महसूस किया। वह महसूस करता है कि लाइन तोड़कर वह गंदा लड़का बन गया है।

3) अमृत विद्यालय में नया है। लड़कों का एक समूह उसे लगातार परेषान करता है। एक दिन उनमें से एक लड़के ने उसकी कुर्सी पर स्याही रख दी। अमृत उस पर बैठा, उसके सभी कपड़ों पर लाल निषान पड़ गए। अमृत जानता था कि यह किसने किया और उसके बारे में बुरा सोचा। अध्यापक ने जब बच्चे का नाम बताने के लिए उसे कहा तो उसने झूठ बोला कि वह नहीं जानता कि यह किसने किया। कक्षा के बाद वह लड़का अमृत के पास आया और पूछा कि उसने अध्यापक को उसका नाम क्यों नहीं बताया। अमृत ने उत्तर दिया कि वह उसे कठिनाई में नहीं डालना चाहता था।

उपर्युक्त दृष्टांतों में विभिन्न बच्चे नैतिक विकास की भिन्न–भिन्न अवस्थाओं में है। प्रारंभ में उनका नैतिक निर्णय इस तथ्य से नियंत्रित होता है कि बड़ों ने उनसे "सही" और "गलत" होने के बारे में क्या कहा है। जैसे–जैसे बच्चे बढ़ते हैं वे सामाजिक रूप से स्वीकृत मानदंडों तथा कानून और व्यवस्था के नियमों और उनके महत्व की अपनी समझ पर आधारित नियमों का पालन करना सीखते हैं। नैतिक परिपक्वता के उच्चतम स्तर पर

व्यक्ति स्वचयनित सिद्धांतों के समूह पर आधारित नैतिक निर्णय लेता है जो कभी–कभी सामाजिक रूप से निर्धारित नियमों और विनियमों के अनुरूप नहीं होते हैं। अमृत के दृष्टांत की भाँति, जो अपने सहपाठी को अध्यापक की फटकार से बचाने के लिए झूठ बोलता है।

जीन पियाजे, स्विस मनोविज्ञानी ने 5 से 13 वर्ष की आयु के बच्चों का खुला साक्षात्कार किया। उसने यह समझने के लिए बाल कहानियों का प्रयोग किया कि वे सही और गलत व्यवहार का निर्णय कैसे लेते हैं। अपने निष्कर्षों के आधार पर उसने बच्चों में नैतिक विकास की दो अवस्थाएँ सुझाईं। 5 से 10 वर्ष तक के बच्चे के लिए नियम अपरिवर्तनीय हैं, और यदि कोई नियम तोड़ता है तो उसे इसके लिए दंडित किया जाएगा। भले ही व्यक्ति का अभिप्राय कुछ भी रहा हो। जैसा कि आप बॉक्स के पहले उदाहरण में देख सकते हैं। अमिता चोरी करने को बुरी बात समझती है क्योंकि उसकी माता ने ऐसा कहा था। उसने चोरी करने का इरादा त्याग दिया क्योंकि उसने सोचा कि ऐसा करने से उसका माता उसे दंड देगी। अमिता के लिए नियम वह है जो उसकी माता ने उसे कहा था। पियाजे ने नैतिक योग्यता के इस रूप को **स्वायत्त नैतिकता** कहा है। जैसे–जैसे बच्चा बढ़ता है, वह सीखता है कि नियम मनुष्य की सुविधा के लिए बनाए गए हैं और उन्हें परिवर्तन किया जा सकता है। बच्चे व्यक्ति के अभिप्रायों पर सोचना आरंभ करता है जो उसकी कार्रवाइयों के आधार हैं। बॉक्स के तीसरे उदाहरण में आप देख सकते हैं कि अमृत ने महसूस किया कि सच बोलने से उसका मित्र परेशानी में पड़ सकता है इसलिए उसने अपने मित्र को दंड से बचाने के लिए झूठ बोलने का निर्णय किया। इस प्रकार की नैतिकता को पियाजे ने **स्वतः परिवर्तन नैतिकता** कहा है। इस प्रकार नैतिक विकास बच्चे के संज्ञानात्मक विकास या चिंतन से काफी अधिक जुड़ा होता है। जैसा कि पहले चर्चा की गई है जब बच्चा छोटा होता है, अन्य के परिप्रेक्ष्य समझने में असमर्थ होता है और वयस्क को अन्य के परिप्रेक्ष्य या स्थिति संवाद और चर्चा के माध्यम से समझाने के लिए बच्चे की सहायता करना आवष्यक होता है। जैसे–जैसे बच्चा बढ़ता है वह सही या गलत के बारे में अपनी स्वयं की धारणा बनाता है।

नैतिक विकास पर मुख्य परिप्रेक्ष्य कोलबर्ग द्वारा दिया गया। नैतिक द्विविधाओं के बारे में सैकड़ों लोगों का साक्षात्कार करने के बाद उसने नैतिक विकास के सिद्धांत प्रतिपादित किए। कोलबर्ग के नैतिकता के सिद्धांतों के तीन स्तर हैं। वे हैं:

- पूर्व परंपरागत
- परंपरागत
- पष्च परंपरागत

इन स्तरों के प्रत्येक स्तर की दो–दो अवस्थाएँ होती हैं:

स्तर I : **पूर्व परंपरागत स्तर (Level I- Pre-conventional Level)** : यह नैतिक विकास का निम्नतम स्तर है जहाँ बच्चे ने नैतिक मूल्यों को आत्मसात नहीं किया है और "अच्छा" या "बुरा" का निर्धारण बाह्य पुरस्कार या दंड द्वारा किया जाता है। यह स्तर दो अवस्थाओं में विभाजित किया जाता है:

- **दंड परिहार और आज्ञाकारिता:** इस अवस्था में नैतिक निर्णय इस पर निर्भर करते हैं, ऐसा करते समय दूसरों की आवष्यकताओं की चिंता नहीं की जाती कि अपने लिए सबसे अच्छा क्या है। केवल उन नियमों का पालन किया जाता है जो सत्तासीन व्यक्तियों द्वारा स्थापित किए जाते हैं।

- **साधन प्रयोजन स्थितिः** इस अवस्था में व्यक्ति अन्य की आवष्यकताएँ और भावनाएँ समझना आरंभ करता है। यद्यपि व्यक्ति अन्य की आवष्यकताएँ पूरी करने का प्रयास कर सकता है परंतु अधिकांषतः व्यक्ति सही और गलत की परिभाषा इस आधार पर करना जारी रखते हैं कि किसी कार्य का उनके लिए क्या परिणाम होगा।

स्तर II: परंपरागत स्तर (Level II- Conventional Level) : परंपरागत नैतिकता स्तर पर भेद नैतिकता का आभ्यंतरीकरण मध्यवर्ती स्तर पर होता है अर्थात् अधिकतम और न्यूनतम के बीच का स्तर। बच्चा बड़ों की आषाएँ पूरी करने और उनकी प्रषंसा प्राप्त करने के लिए नियमों का पालन करता है। इस स्तर की दो अवस्थाएँ हैंः

- **अच्छा बालक :** अच्छी बालिका स्थितिः इस अवस्था में नैतिक निर्णय अन्य विशेषकर जो सत्तासीन लोगों की प्रषंसा प्राप्त करने के लिए किए जाते हैं।

- **कानून और व्यवस्था स्थितिः** इस स्तर पर व्यक्ति अपने स्वयं के परिवार के स्थान पर वृहत्तर समाज के बारे में सोचने लगता है। इस अवस्था में कानून और नियमों का परिचालन करने के लिए नैतिक निर्णय लिए जाते हैं।

स्तर III : पष्च परंपरागत स्तर (Level II- Post-conventional Level) : यह नैतिक विकास का उच्चतम स्तर है जहाँ व्यक्ति नैतिक मूल्यों और नियमों का आत्मसात कर लेता है और उनका अनुसरण स्वेच्छा से प्रत्येक स्थिति में हमेषा करता है। इस स्तर की दो अवस्थाएँ हैंः

- **सामाजिक संविदा स्थितिः** अब व्यक्ति कानून और नियमों के बारे में यह सोचने लगता है कि इनका विकास समाज की आवष्यकताओं की पूर्ति के लिए होता है और यदि इनसे समाज की आवष्यकताएँ पूरी न हो रही हैं तो उन्हें बदला जा सकता है।

- **सार्वभौमिक नैतिक सिद्धांत स्थितिः** यह नैतिक विकास की उच्चतम स्थिति है। यहाँ नैतिक निर्णय व्यक्ति अपनी आत्मा की आवाज के अनुरूप लेता है और आवष्यकता पड़ने पर वह उन नियमों को भी तोड़ सकता है जो उसके अपने ही सिद्धांतों के विरुद्ध जाते हों।

कोलबर्ग का नैतिक विकास का सिद्धांत नैतिक द्विविधा पर किए गए उसके साक्षात्कारों पर आधारित था। परंतु कोलबर्ग के प्रयोग के विषय प्रायः सभी पुरुष थे। एक अन्य मनोवैज्ञानिक कैरोल गिलिगन ने तर्क दिया कि कोलबर्ग का सिद्धांत महिलाओं में नैतिक विकास का वर्णन पर्याप्त रूप से नहीं करता है। वह पहली मनोवैज्ञानिक थी जिसने नैतिक विकास लिंग/जेंडर भेद पर विचार किया। अपने ही अनुसंधान में गिलिगन ने नोट किया था कि बालिकाएँ अपने अंतर्वैयक्तिक संबंध के बारे में अधिक सावधानी और सहानुभूतिषील होती हैं। उसके अनुसार बालिकाओं के समाजीकरण की प्रक्रिया अंतर्वैयक्तिक संबंधों पर और अन्य की भलाई का उत्तरदायित्व लेने पर अधिक बल देती हैं इसलिए महिलाएँ दूसरों की भलाई पर अधिक बल देते हुए नैतिकता बढ़ाती हैं।

गिलिगन ने अपने सिद्धांत में एक ओर इस बात के महत्व पर प्रकाष डाला कि लोग सहानुभूतिषील और जिम्मेवार तरीके से अन्य लोगों के बारे में सोच सकते हैं। उसके कार्य

उन तरीकों को सामने लाए जिनमें पुरुष और महिलाओं के बीच नैतिकता का विकास भिन्न होता है। परंतु दूसरी ओर उसके सिद्धांत की आलोचना भी हुई कि वह पुरुष और महिलाओं को बहुत रुढ़िवादी तरीके से देखती है। उसके सिद्धांत के अनुसार महिलाएँ दोनों लिंगों के लिए अधिक प्रोत्साहनकारी ओर देखभाल करने वाली देखता है। जबकि पुरुषों अधिक तर्कसंगत दिखाई पड़ते हैं।

नैतिक विकास का अध्ययन बच्चों में नैतिकता का विकास बढ़ाने में मातापिता और अध्यापक की भूमिका पर बल देता है। अध्यापक को बच्चे को समाज द्वारा स्वीकृत नैतिक मानदंड सिखाने चाहिए। बच्चों को अन्य लोगों के संवेगों तथा संपत्ति का सम्मान करना सीखना चाहिए। आपको अध्यापक के रूप में सहनषीलता और सहृदयता विकसित करने में बच्चों की सहायता करनी चाहिए। उन्हें ज्ञात होना चाहिए कि समाज के समुचित कार्य संचालन के लिए नियम और कानून हैं और इसलिए उनका अनुसरण करना आवष्यक है। उन्हें नियमों और विनियमों की जानकारी देने के अलावा निर्णय करने योग्य बनाने पर बल होना चाहिए। इसके लिए आप कहानियाँ, नाटक आदि का प्रयोग कर सकते हैं, बच्चों को सोचने और अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए अवसर दें। बच्चों के लिए प्रलोभन का प्रतिरोध करने के लिए संयम विकसित करने के तरीके जानना आवष्यक है।

नैतिक विकास करने में बच्चों की सहायता के कुछ तरीके उपयुक्त कहानियों के माध्यम से होते हैं, उदाहरण के लिए, पषु आधारित पंचतंत्र और जातक कथाएँ अगाध भंडार हैं, जिनका प्रयोग आप कर सकते हैं। इसी प्रकार अकबर और बीरबल की कहानियाँ बच्चों के लिए निष्चित स्थिति में तर्क समझने में सहायक होती हैं। आप घर, समाचारपत्र, मीडिया से उदाहरण लेकर नैतिक आयामों के इर्द गिर्द चर्चा के लिए बच्चों को प्रोत्साहित कर सकते हैं। इन सबके अलावा यह महत्वपूर्ण है कि बच्चे के जीवन में आपके अलावा अन्य वयस्क भी आदर्ष के रूप में उभरे। आपको महसूस करना चाहिए कि नैतिक विकास एक प्रक्रिया है और बच्चे जैसे जैसे बड़े होते हैं, वे ज्ञान और तर्क सीखते हैं। बहुत कुछ जीवन के अनुभव की किस्म पर भी निर्भर करता है जो उनके पास है। जो बच्चे कभी–कभी गलतियाँ करते हैं, उन्हें इस आधार पर वर्गीकृत करने से बचना चाहिए। ऐसा विकास की प्रक्रिया का भाग है और परंतु वर्गीकृत किए जाने से उनका जीवन प्रभावित होता है।

इस पूरी इकाई में बच्चों के मनोवैज्ञानिक विकास के संवर्धन में अध्यापकों और विद्यालय के प्रभाव और भूमिका पर बल दिया गया है। अगले भाग में इस विषय पर विस्तार से चर्चा की जाएगी।

3.8 माता–पिता और अध्यापकों का प्रभाव

बच्चे के विकास में परिवार और विद्यालय बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बच्चा जिस प्रकार अपने मातापिता, समवयस्कों और अध्यापक से जुड़ता है मुख्यतः उनसे प्राप्त अनुभवों और उनके प्रति अपनी भावनाओं द्वारा नियंत्रित होता है। इसलिए जिस तरीके में वयस्क बच्चों के साथ व्यवहार करते हैं, वह भी उनके प्रति उसके व्यवहार को बनाता है। उदाहरण के लिए, यदि बच्चा कुछ बात अपने मातापिता से कहता है और मातापिता उपर्युक्त ध्यान नहीं देते हैं, बच्चा उनका ध्यान आकर्षित करने का तरीका खोज लेगा। बच्चा चिल्ला सकता है, रो सकता है, वस्तुओं को इधर–उधर फैंक सकता है। धीरे–धीरे यदि यह स्थिति जारी रहती है, बच्चा अपने मातापिता का ध्यान आकर्षित करने के तरीके के रूप में इसे अपना लेगा।

डायना वॉमिंड ने अभिभावकता (parenting) के चार मुख्य प्रकार दिए। इन अभिभावकता शैलियों की मुख्य विशेषताओं और बच्चे पर पड़ने वाले उनके प्रभाव पर चर्चा नीचे की गई है:

साधिकारपूर्ण शैली (Authoritative Style) : साधिकारपूर्ण मातापिता अपने बच्चों को बढ़ने के लिए स्नेहमय, सहयोगषील और पारिवारिक वातावरण प्रदान करते हैं। वे अपने बच्चों के व्यवहार से ऊँची आषाएँ, और मानक बनाए रखने तथा पारिवारिक मानक निरंतर लागू रखने की आषा करते हैं। मातापिता और बच्चों के बीच खुले संवाद के लिए स्थान सुलभ होता है, बच्चों को स्पष्ट किया जाता है कि कुछ व्यवहार क्यों स्वीकार्य हैं जबकि अन्य नहीं है। साधिकारपूर्ण मातापिता बहुधा पारिवारिक निर्णय करने में अपने बच्चों को शामिल करते हैं। साधिकारपूर्ण मातापिता के बच्चों प्रसन्न, आत्मविष्वासी, जिज्ञासु, स्वतंत्र, सर्वप्रिय, अन्य के सम्माननीय, अच्छे निर्णायककर्त्ता और विद्यालय में सफल पाए जाते हैं।

अधिकारवादी शैली (Authoritarian Style) : अधिकारवादी मातापिता साधिकारपूर्ण मातापिता की अपेक्षा अपने बच्चों के प्रति कम संवेगात्मक स्नेह दिखाते हैं। वे अपने बच्चों के व्यवहार से उच्च मानक की आषा करते हैं और बच्चों की आवष्यकता का अधिक ध्यान रखे बिना व्यवहार के नियम निर्धारित करते हैं। मातापिता और बच्चों के बीच मुष्किल से ही कोई बातचीत होती है, मातापिता चाहते हैं कि बच्चों के लिए तय किए गए नियमों का पालन वे कोई प्रष्न किए बिना करें। उन पर अनुषासन, उनकी स्वीकृति के बिना जबरदस्ती लगाया जाता है। अधिकारवादी मातापिता बच्चे और अपने बीच चर्चा के लिए बहुत कम गुंजाइष देते हैं। अधिकारवादी मातापिता के बच्चों को सबसे अधिक असंतुष्ट, चिंताग्रस्त और निम्न स्वाभिमानी, पहल करने में असमर्थ, पराश्रित, सामाजिक अकुषल और कभी–कभी अवज्ञाकारी पाया जाता है।

अनुज्ञापक शैली (Permissive Style) : अधिकारपूर्ण मातापिता की भाँति अनुज्ञापक मातापिता भी स्नेहभाव, संवेदनषील और सहयोगषील पारिवारिक वातावरण प्रदान करते हैं। परंतु वे अपने बच्चों के व्यवहार एवं मानक नियंत्रण से बहुत कम आषाएँ रखते हैं। वे अपने बच्चों को अपने अधिकांष निर्णय स्वयं करने देते हैं तथा अनुचित व्यवहार के लिए विरले ही दंड देते हैं। चूँकि सभी बातों की अनुमति होती है इसलिए शक्ति बच्चों के हाथ में होती है, जो प्रत्येक बात का निर्णय करते हैं। मातापिता षिषु संबंध मूलतः औपचारिक होते हैं और इसलिए मातापिता और बच्चों के बीच प्रतिष्ठा की कोई अवधारणा नहीं होती है। अनुज्ञापक मातापिता के बच्चे प्रायः स्वार्थी, भौतिकवादी, स्वत्तात्मक, निरुउद्देष्य, पर आश्रित, आवेगषील प्रवृत्ति के होते हैं।

असंबद्ध अभिवृत्ति शैली (Uninvolved/Indifferent Style) : असंबद्ध मातापिता अपने बच्चों को कम संवेगात्मक सहायता प्रदान करते हैं। उन्हें अपने बच्चों के व्यवहार से बहुत कम आषाएँ होती हैं। वे अपने ही जीवन में इतने अभिव्यस्त होते हैं कि उन्हें अपने बच्चों के जीवन में कम रुचि होती है। कभी–कभी बच्चा केवल मातापिता के लिए बाध्यता होता है। ऐसे संबंध में मातापिता और बच्चे दोनों अपने ही बारे में निर्णय करते हैं और इस प्रकार एक ही घर में अलग–अलग जीवन जीते हैं। उदासीन मातापिता के बच्चे बहुधा अविष्वासी, अवज्ञाकारी, आत्मनियंत्रण विहीन, दीर्घकालिक लक्ष्य रहित और अधिक कुंठाग्रस्त होते हैं।

लालनपालन के रूप बच्चों के अन्य वयस्कों के साथ संबंधों में भी विकसित हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, अधिकारवादी लालनपालन की भाँति अधिकारवादी षिक्षण भी हो सकता है, जहाँ अध्यापक–शिष्य संवाद का कोई स्थान नहीं है, और कोई प्रष्न नहीं किए बिना अनुपालन किए जाने के लिए नियम निर्धारित किए जाते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

आपने बच्चे के लालनपालन के चार भिन्न–भिन्न प्रकार पढ़े हैं। अपने मित्रों से उन पर चर्चा कीजिए और निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिएः

7) आप के विचार में उदासीन अध्यापक किस तरह का होगा, उसकी विशेषताएँ लिखिए।

....

....

....

....

....

8) प्राधिकारिक और सत्तावादी अध्यापक में क्या अंतर है?

....

....

....

....

....

9) अनुज्ञापक अध्यापक की कक्षा आपकी दृष्टि में कैसा होना चाहिए?

....

....

....

....

....

इस इकाई के अगले भाग में आप पढ़ेंगे कि बच्चे के मनोवैज्ञानिक विकास के बारे में आपका ज्ञान अध्यापक के रूप में आपके कार्य से संबद्ध है।

3.9 यह अध्यापक के कार्य से कैसे संबद्ध है?

पूर्ववर्ती भागों में की गई चर्चा के आधार पर आप सुविधाप्रदाता के रूप में अपनी भूमिका समझ सकते हैं। आपको भी बच्चों का प्रेक्षण करने, उनकी समस्याओं को समझने और उनका समाधान करने में उनकी सहायता करने की आवश्यकता है। इस भाग में परामर्षदाता के रूप में आपकी भूमिका पर चर्चा की गई हैः

- बच्चों की आवष्यकताएँ समझना
- बच्चों का प्रेक्षण करना और उनसे अंतःक्रिया करना
- अध्येयताओं की समस्याओं की पहचान करना और उनका समाधान करने में उनकी सहायता करना
- बच्चों के लिए सुरक्षित और सहयोगषील, वातावरण उत्पन्न करना जो उनकी वांछित वृद्धि और विकास के अनुकूल हों।
- अध्येयताओं के लिए अध्ययन प्रक्रिया रोचक बनाना

रंगानाथन (2000) के अनुसार जो अध्यापक बच्चे की मनोसामाजिक आवष्यकताएँ समझता है, वह किसी भी ऐसी व्यवस्था को अस्वीकार करेगा जिसमें बच्चा अपने आपको या तो घटिया या दूसरों के मुकाबले अपने आपको असत्य ही श्रेष्ठ मानता है, बच्चे की प्रसन्नता और अप्रसन्नता विद्यालय में उसके अनुभवों के साथ प्रत्यक्ष रूप से संबद्ध होती है। विद्यालय या तो बच्चे में संवेगात्मक तंदुरुस्ती और स्थायित्व को प्रोत्साहित कर सकता है या फिर उन्हें बाधित कर सकता है। इसलिए अध्यापक को बच्चे की मनोसामाजिक आवष्यकताओं पर ध्यान देना चाहिए और उनके बारे में अपनी समझ के आधार पर कक्षा का वातावरण बच्चे के चहुँमुखी विकास के लिए अनुकूल बनाना चाहिए।

3.10 सारांष

इस इकाई में सामाजिक विकास की विस्तृत अर्थों में मनोवैज्ञानिक पक्षों को शामिल करते हुए व्याख्या की गई है। मनोसामाजिक विकास में विकास के सांवेगिक एवं सामाजिक पक्ष सम्मिलित हैं। यह विकास जैविक प्रक्रियाओं तथा तात्कालिक वातावरण की अंतःक्रिया के परिणामस्वरूप होता है। एक अध्यापक के लिए, इस विकास को समझने से, एक बच्चे और उसके वातावरण के संबंध को पहचानने में मदद मिलती है।

अगला पक्ष, बच्चे का सांवेगिक विकास है। बच्चे का संवेगिक प्रदर्षन जीवन के प्रारंभिक वर्षों में स्वाभाविक होता है और जैसे—जैसे वह बड़ा होता है, वह अपने संवेगों को सामाजिक रूप से स्वीकृत तरीकों से प्रदर्षित करना सीख जाता है। बच्चे का सामाजिक विकास, कुछ आयु संबंधित प्रतिमानों पर भी चलता है। इस परिप्रेक्ष्य में, इरिक्सन और कक्कड़ के कार्यों की विशेष रूप से चर्चा की गई है। बच्चे में आत्मधारण और स्वाभिमान, वे अन्य कारक हैं, जो बच्चे के विकास को प्रभावित करते हैं। इनके साथ, बच्चे का नैतिक विकास भी आवष्यक है। कोहलबर्ग के सिद्धांत पर विशेष ध्यान देने की आवष्यकता है।

अंतिम भाग, डायना एवं वमरिंड द्वारा प्रस्तुत किए गए पालन—पोषण के चार स्वरूपों की चर्चा करता है। वे अधिकारवादी एवं असंबद्ध अभिवृत्ति शैली के हैं। अध्यापक को न केवल अधिगम का सहायक, वरन् बच्चों का अवलोकक और उनकी समस्याओं को पहचानने वाला बनने की आवष्यकता है।

3.11 इकाई के अंत में अभ्यास

1) बच्चे का प्रेक्षण घर में या विद्यालय में करें। उसके संवेगात्मक व्यवहार नोट कीजिए। ऐसे व्यवहार के कारणों की पहचान कीजिए। उसके मनोवैज्ञानिक विकास और व्यवहार के बीच संबंधों पर प्रकाष डालते हुए संक्षिप्त रिपोर्ट तैयार कीजिए।

आप निम्नलिखित शामिल कीजिए:

i) बच्चे की बुनियादी सूचना, जैसे नाम, आयु, लिंग, परिवार

ii) चयनित बच्चे को ही चुनने के लिए आपके कारण

iii) मातापिता, भाई बहनों, समकक्षियों से उसके संबंध

iv) कक्षा में व्यवहार

v) ऐसे व्यवहार का संभव कारण

2) ऐसे तरीकों के बारे में सोचिए जिनमें बच्चों की समस्याएँ उनके व्यवहार द्वारा पहचानी जा सकते हैं। बच्चे की व्यवहार संबंधी एक समस्या की पहचान कीजिए। उन तरीकों की चर्चा कीजिए जिनके द्वारा अध्यापक बच्चे की सहायता कर सकता है?

3) अपनी कक्षा से उन पाँच बच्चों को चुनिए जो भिन्न–भिन्न सामाजिक, आर्थिक, जाति या धार्मिक समूह के हों। बालिकाओं का चयन भी सुनिष्चित करें। व्यक्तिगत आधार पर बच्चों से अंतःक्रिया करें और यह समझने का प्रयास करें, वे अपने बारे में क्या सोचते हैं और अपने बारे में किस प्रकार वर्णन करते हैं? अपनी कक्षा में पाँच बच्चों के "स्व–अवधारणा" संबंधी अध्ययन के अंतर्गत अपनी टिप्पणी लिखिए।

4) आप अपनी कक्षा और षिक्षण को बच्चे की मनोसामाजिक आवष्यकताओं के अनुरूप किस प्रकार बना सकते हैं?

3.12 बोध प्रष्नों के उत्तर

1) मीरा नवीन परिस्थितियों में दोस्त ढूँढ़ने में कठिनाई अनुभव करती है।

2) समायोजन संबंधी समस्या

3) नहीं, प्रत्येक बच्चे विभिन्न परिस्थितियों में अपने–अपने तरीके से व्यवहार करता है।

4) अपने अनुभव लिखें।

5) अपने अनुभव लिखें।

6) पहल की भावना: रोल प्ले, वाद–विवाद, बच्चों द्वारा निर्देषित अभिनय, बच्चों के साहित्य का दूसरे बच्चों की समस्याओं के समाधान व नियोजन से प्रयोग करना

परिश्रम की भावना

- बच्चों द्वारा कक्षा की सफाई
- प्रदर्षन पट्ट पर विभिन्न संबंधित सूचनाएँ प्रदर्षित करना
- एक बच्चे को दूसरों की उत्तर पुस्तिकाएँ एकत्र करने को कहना।

7) एक उदासीन अध्यापक दूसरों की गतिविधियों में सम्मिलित नहीं होता है:

लक्षण:

- अपने जीवन में पूर्णतया व्यस्त
- बच्चों की उपलब्धियों में न्यूनतम रुचि
- कक्षा में अनुषासन का अभाव
- अध्यापकों व बच्चों के बीच कोई सम्मान नहीं
- अपने कार्य के प्रति जवाबदेही न होना

8)

प्राधिकारिक अध्यापक	सत्तावादी अध्यापक
कठोर, अटल एवं निरंकुष नियंत्रण	कठोर अनुषासन परंतु बच्चों की भलाई एवं उचित कारण के साथ
कक्षा से वर्चस्वता, बच्चों में सकारात्मक वैयक्तिक विकास को निर्देषित नहीं करती।	बच्चों में सकारात्मक वैयक्तिक विकास होता है।
बच्चों व अध्यापकों के बीच कोई खुली चर्चा नहीं होती।	बच्चों व अध्यापकों के बीच खुली चर्चा को स्थान दिया जाता है।
बलपूर्वक अनुषासन लादा जाता है।	बलपूर्वक अनुषासन नहीं लादा जाता है।

9) अनुज्ञापक अध्यापक, स्नेहभाव युक्त सहायक कक्षा वातावरण प्रदान करते हैं परंतु वे बच्चों से बहुत कम आषाएँ रखते हैं। कक्षा में नियंत्रण का अभाव होता है। वे बच्चों की उद्यमषीलता की गुणवत्ता पर कम ध्यान देते हैं और संरचनात्मक अधिगम उचित प्रकार नहीं होता है।

3.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बर्क, लउरा ई, (2003), *चाइल्ड डेवलेपमेंट,* नई दिल्लीः पियरसन एजुकेषन

कर्क, लउरा ई, (2007), *डेवलपमेंट थ्रू द लाइफस्पैन,* दिल्लीः पियरसन एजुकेषन

कक्कड़, एस., (1981) *दि इनर वर्ल्ड,* दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

ऑरमार्ड जे.ई. (1998), *एजुकेषनल साइकोलॉजीः डेवलपिंग लर्नर,* (द्वितीय संस्करण), न्यू जर्सीः ओहियो

रंगनाथन, एन. (2000), *दी प्राइमरी स्कूल चाइल्डः डेवलपमेंट एंड एजुकेषन,* नई दिल्ली : ओरियंट लॉगमैन

संट्रोक, जॉन, डब्ल्यू, (2008) *ए टॉपिकल अप्रोच टू लाइफ–स्पान डेवलपमेंट* (तीसरा संस्करण), नई दिल्ली : टाटा मैग्राहिल

वुलफ्लॉक, अनीता (2009), *एजुकेषनल साइकोलॉजी*, दिल्ली, पियरसन प्रिन्टिस हॉल